सर्वशिक्षा अभियान

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

सर्वशिक्षा अभियान का अर्थ है–समाज के हर वर्ग को शिक्षित करना, चाहे वे जिस उम्र वर्ग के हों। पढ़ने लिखने की कोई उम्र नहीं होती। बचपन से लेकर मृत्यु पर्यन्त आदमी को विद्यार्थी बने रहना चाहिए। अच्छी बातों को ग्रहण करना और बुरी बातों का त्याग करना मानव का उद्देश्य होना चाहिए। आजकल शिक्षा का विस्तार हो रहा है। औपचारिक और अनौपचारिक दोनों विधियों से शिक्षा का प्रचार–प्रसार किया जा रहा है। विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय के स्तर पर शिक्षा को बढ़ावा दिया जा रहा है। विद्या से व्यक्ति में सुधार होता है। व्यक्ति का सुधार समाज का सुधार है और समाज का सुधार राष्ट्र का सुधार है। इसीलिए कहा गया हैं कि सुधरे व्यक्ति समाज व्यक्ति से राष्ट्र स्वयं सुधरेगा। दूर दराज के क्षेत्रों में जो लोग शिक्षा से वंचित रह गये है, उनको शिक्षा सुलभ कराने के लिए सर्वशिक्षा अभियान की व्यवस्था की गई है। घर–घर में शिक्षा की ज्योति जलाने के लिए लोगों को प्रेरित किया जाता है कि वे अपने बच्चों को पढ़ने के लिए विद्यालयों में भेजे। विद्यालयों में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था, भोजन और ड्रेस भी निःशुल्क दिया जाता है। लड़के और लड़की में बिना अन्तर किये शिक्षा देनी चाहिए। शिक्षा ज्ञान के साथ ही साथ भावनात्मक विकास के लिए होनी चाहिए। शिक्षा से मानव शिक्षित होता है। शिक्षा मानव के व्यक्तित्व में आमूल–चूल परिवर्तन कर देती है। सभ्य समाज में शिक्षा की महती आवश्यकता होती है। जिस समाज में शिक्षा का जितना अधिक प्रचार–प्रसार होता है वह समाज उतना ही शिक्षित और प्रतिष्ठित माना जाता है। शिक्षा के बिना व्यक्तित्व विकास संभव नहीं है। वैदिक काल से लेकर के आज तक की प्रचलित शिक्षा व्यवस्था में कई परिवर्तन देखे गये है। वैदिक काल में पुरुषों और स्त्रियों को शिक्षा का समान अधिकार प्राप्त था। स्त्रियां भी वैदिक सूत्रों की रचनाकार हुई है। पुरुषों के समान स्त्रियां भी सामाजिक समारोह और धार्मिक समारोह में समान रूप से भाग लेती थी। प्राचीन काल में शिक्षा की गुरूकुल व्यवस्था प्रचलित थी। इसमें शिष्य गुरु के पास जाकर के जीवन निर्माण के लिए शिक्षा ग्रहण करता था। गुरुकुल व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था थी जहां पर

विद्यार्थी और गुरु बड़े ही आत्मीय भाव से रहा करते थे। विद्यार्थी के जीवन का प्रारंभिक पच्चीस वर्ष जिसे ब्रह्मचर्य आश्रम कहा जाता था, में शिक्षा ग्रहण के लिये निर्धारित था। ब्रह्मचर्य आश्रम का तात्पर्य है कि विद्यार्थी घर से दूर गुरु के आश्रम में जाकर विद्या ग्रहण करे। आश्रम के व्यवस्था की पूरी जिम्मेदारी विद्यार्थियों के ऊपर रहती थी। प्रसिद्ध आचार्यों के गुरुकुल में पढ़े हुए छात्रों का सब जगह बहुत सम्मान होता था। भगवान राम ने गुरु वशिष्ठ के आश्रम मे रहकर शिक्षा ग्रहण की थी। पाण्डवों ने गुरु द्रोणाचार्य से शिक्षा ग्रहण की थी। गुरुकुल आश्रमों में हजारों विद्यार्थी रहते थे। आश्रमों के प्रधान को कुलपति कहा जाता था। रामायण काल में वशिष्ठ का वृहद् आश्रम था, जहां राजा दिलीप तपश्चर्या करने गये थे, जहां विश्वामित्र को ब्रह्मत्व प्राप्त हुआ था। भारत की प्राचीन शिक्षा पद्धति में अनौपचारिक तथा औपचारिक दोनों प्रकार के शैक्षणिक केन्द्रों का उल्लेख प्राप्त होता है। औपचारिक शिक्षा केन्द्रों में शिक्षा आश्रमों और गुरूकुलों के माध्यम से दी जाती थी। ये ही शिक्षा के उच्च केन्द्र थे, जबकि परिवार, पुरोहित, पण्डित, सन्यांसी इत्यादि के माध्यम से अनौपचारिक शिक्षा प्राप्त होती थी। सार्वजनिक शिक्षण संस्थाएं बौद्ध विहारों में भी स्थापित हुई थी। भगवान बुद्ध ने उपासकों की शिक्षा दीक्षा पर अधिक बल दिया था। इनमें धार्मिक विषयों का अध्ययन और आध्यात्मिक विषयों का अभ्यास कराया जाता था। धीरे–धीरे शिक्षा का विकास होता गया और आज शिक्षा की जो व्यवस्था प्रचलित है वह एक आदर्श व्यवस्था है। इस शिक्षा व्यवस्था के अन्तर्गत सभी धर्मों और जातियों के विद्यार्थी समान रूप से शिक्षा ग्रहण कर सकते है। आजकल शिक्षा को आजीविका से जोड़ने का प्रयास हो रहा है। इस कारण से व्यक्तित्व निर्माण के साथ ही साथ आजीविका का प्राप्त होना शिक्षा का मुख्य उद्देश्य हो गया है। बहुत पहले महात्मा गांधी ने कहा था कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जिससे व्यक्तित्व निर्माण के साथ ज्ञान की वृद्धि हो। आजकल उच्च शिक्षा के लिए विद्यालयों, महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों के माध्यम से उच्च शिक्षा की व्यवस्था की गयी है। ऐसे केन्द्रों पर विद्यार्थी अपनी रूचि और सामर्थ्य के अनुसार शिक्षा ग्रहण करते है और अपने जीवन का निर्माण करते है। शिक्षा के विकास के लिए समय–समय पर सरकार आयोगों का गठन करती है और शिक्षा के स्वरूप में बदलाव के लिए क्या किया जाना चाहिए इस विषय पर आयोग से राय मांगती है। इसी का परिणाम है कि

समय–समय पर शिक्षा का स्वरूप बदलता रहा है। दुर्भाग्य की बात यह है कि स्वतंत्रता के बाद विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा और प्राविधिक शिक्षा का स्तर तो बढ़ा है परन्तु प्राथमिक शिक्षा का आधार कमजोर होता चला गया। शिक्षा का लक्ष्य राष्ट्रीयता, चरित्र निर्माण वह मानव संसाधन विकास के स्थान पर मशीनीकरण रहा। देश में प्रौढ शिक्षा और साक्षरता के नाम पर समय–समय पर अनेक योजनाएं चलायी जाती रहती है किन्तु जितना लाभ समाज को मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पाता। समाज का सबसे निचला वर्ग जब तक शिक्षित नहीं हो सकता तब तक पूर्ण सभ्यता की कल्पना बेईमानी होगी। अतः समाज के हर वर्ग को शिक्षित करने का प्रयास करना चाहिए।